Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 19th April 2019, Revised on 24th April 2019; Accepted 29th April 2019

आलेख

विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर राष्ट्रीय संस्कृति के समावेश हेतु विषय–वस्तु एवं व्यूह–रचना

* **डॉ.रामावतार**
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा संकाय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (मानित् विश्व विद्यालय)
गाँ.वि.मन्दिर, सरदारशहर (चूरू) राज
Email-ramawatargodara@gmail.com, Mob. - 93514046609

मुख्य शब्द **-** *संस्कृति, सभ्यता, शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा, विषयवस्तु, शिक्षा आयोग, विद्यालयी व्यवस्था सांस्कृतिक दृष्टिकोण, प्राकृतिक नियम, जीवनचर्या* ***आदि.***

सारांश

मनुष्य जन्म के समय सजीव प्राणी मात्र होता है। जब वह गर्भावस्था में पल्वित हो रहा होता है, उस समय उसमें जन्म के बाद के जीवन की पूर्व तैयारियाँ चलती हैं। अपनी विरासतकालीन संस्कृति से व्यक्ति समाज के लिए एक आदर्श व्यक्ति बन कर अभिप्रेरणा का स्रोत बन सकता है जब उसे उचित शिक्षा प्रदान की जाए। संस्कारों का परिमार्जन शिक्षा के माध्यम से किया जा सकता है। क्योंकि शिक्षा व्यक्ति को अतीत का आईना दिखाती है, शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यवस्तु के अलावा मार्गदर्शक के रूप में समाज का अभिकर्त्ता अध्यापक होता है। उचित और गौरवपूर्ण विषयवस्तु वाली शिक्षा, संस्कारों का परिमार्जन कर संस्कृति का सृजन करती हैं, संस्कृति वह आधारशिला है जिसके आश्रय से जाति, समाज व देश का विशाल भव्य प्रासाद निर्मित होता है। मानव द्वारा अप्रभावित प्राकृतिक शक्तियों को छोड़कर जितनी भी मानवीय परिस्थियाँ हमें चारों ओर से प्रभावित करती है, उन सभी की सम्पूर्णता को संस्कृति कहते हैं, संस्कृति के इस घेरे का नाम ही 'सांस्कृतिक पर्यावरण' है तथा सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रति मानवीय संवेदनशीलता सांस्कृतिक दृष्टिकोण है। जिसका उत्पाद सभ्यता है। सभ्यताएँ पल्लवित और विध्वंसित होती हैं, परन्तु सांस्कृतिक आयाम विभिन्न माध्यमों से आगे बढ़ते हैं। पाठ्यवस्तु की प्रकृति दोनों को प्रभावित एवं प्रेरित करे, स्वदेशी समाज के संस्कारों को स्पष्ट करे, स्वदेश प्रेम और भ्रातत्त्व भावना विकसित कर व्यक्ति को श्रेष्ठ मानव बना सके, अपने लोक–रिवाजों, महान व्यक्तित्त्वों के आदर्शों को आत्मसात कर वैश्विक स्तर पर उनका प्रकाशन कर सके तथा उच्च आदर्श नागरिक समाज में प्रतिष्ठापित कर सके, वर्तमान की भौतिकवादी संस्कृति को नकार कर अध्यात्मवादी आदर्श मूल्यों को समझकर उनका समाज में प्रसारण कर सकने वली होनी चाहिए।

मनुष्य जन्म के समय सजीव प्राणी मात्र होता है, धीरे–धीरे उसका विकास विभिन्न आयामों में होता है और एक नवजात अपने शैशवकाल की अवस्था से बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और आगे की अवस्थाओं में बढ़ता है, परन्तु अकेले इन अवस्थाओं में विचरण मार्ग से ही आगे बढ़ने से जीवन सम्पादित होने वाला नहीं है। एक मनुष्य के रूप में प्राणी जन्म लेता है, और वह गर्भावस्था में जब पल्वित हो रहा होता है, उस समय से ही उसमें जन्म के बाद के जीवन की पूर्व तैयारियाँ चलती रहती है। जन्म के बाद एक बालक, समाज के लिए उचित संस्कारों से परिमार्जित व्यक्ति बने, समाज में नया उत्पाद प्रस्तुत करते समय अपनी विरासतकालीन संस्कृति व सभ्यता को मानस में रखे, ताकि वह समाज के लिए एक आदर्श व्यक्ति बन कर अभिप्रेरणा का स्रोत बन सके। इस धरा पर विचरण करने वाले प्राणियों में मानव सर्वोत्कृष्ट मानसिक शक्ति वाला प्राणी है। इस वाक्य को अन्य रूप में हम कह सकते हैं, कि मानव अपनी मस्तिष्कीय शक्ति के कारण अन्य प्राणियों से अधिक श्रेष्ठ है, परन्तु इस बात में कहीं कोई सन्देह नहीं होना चाहिए, कि जब यह कहा जाए कि संस्कारों के अभाव में मनुष्य पाश्विक प्राणी होता है। यदि ऐतिहासिक प्रसंग में जाकर देखें तो हम पायेंगे कि इस पृथ्वी पर आज की आधुनिक सभ्यता से साम्यता रखने वाली कई सभ्यताएँ विकसित और विध्वंसित हुई

हैं। परन्तु उन सभ्यताओं के तात्कालिक संस्कार आज के आधुनिक समाज में भी उतने ही प्रासंगिक है, जो मनुष्य को मानवता की श्रेणी में रखने के लिए जिम्मेदारी निभाते हैं। इस बात में कहीं कोई सन्देह नहीं, कि मानव अपने विकास के लिए उचित और अनुचित तौर–तरीके अपना लेता है, और एक क्षणिक स्वार्थ की पूर्ति कर खुश हो जाता है, परन्तु आगामी पीढ़ियों के लिए वह एक आदर्श नहीं बन पायेगा, क्योंकि उसने ''मानव जीवन को मानवीयतापूर्ण बनाये रखने के लिए समाज स्वीकृत मानसिक भाव'' का अनुकरण नहीं किया। इन समाज स्वीकृत भावों को जब कोई मानव प्राणी अपने मानसिक स्वरूप में अपना कर अपने आचरण में ढ़ाल लेता है, तो मानव को संस्कारवान कहेंगे। इन संस्कारयुक्त प्रतिमानों को समाज के अन्य लोगों द्वारा स्वीकार कर अपने आचरण में सामान्यीकृत करना, उचित शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से ही सम्भव हो पायेगा।

शिक्षा मानव के सर्वांगीण विकास का एक प्रबल आयाम है। शिक्षा संस्कारों का परिमार्जन एवं स्थानान्तरण करती है। एक समान, परिमार्जित और उत्कृष्ट संस्कार जो मानवीय स्वभाव, आकांक्षाओं और सभ्यता को विभूषित करने वाले हों तो संस्कारों के इस पुंज को संस्कृति कहते हैं। संस्कृति, संस्कृत भाषा का शब्द है जो 'कृ' धातु में 'सम' उपसर्ग और 'कितन्' प्रत्यय लगाने से बनता है। इसका शाब्दिक अर्थ होता है– परिष्कृत करना/परिमार्जित करना। वस्तुतः यह शब्द मनुष्य की सहज प्रवृत्तियों, नैसर्गिक शक्तियों और उनके परिष्कार का द्योतक है। प्रत्येक देश के मनुष्यों के आचार–विचार में भिन्नता होती है और निरन्तर परिष्कार अथवा सुधार की दृष्टि भी भिन्न होती है। संस्कृति शब्द से पृथ्वी के किसी विशिष्ट भूखण्ड के लोगों की मानसिक क्षमता एवं प्रगति का एक दीर्घकालीन इतिहास प्रकट होता है। पं.जवाहर लाल नेहरू के अनुसार–''संस्कृति का अर्थ मनुष्य का आन्तरिक विकास और उसकी नैतिक उन्नति है, पारम्परिक सद्व्यवहार है और एक–दूसरे को समझने की शक्ति है।' डॉ. सम्पूर्णानन्द के अनुसार– ''संस्कृति वह आधारशिला है, जिसके आश्रय से जाति, समाज व देश का विशाल भव्य प्रासाद निर्मित होता है।''

सामान्य अर्थ में संस्कृति सीखे हुए व्यवहारों की सम्पूर्णता है। परन्तु संस्कृति की अवधारणा इतनी विस्तृत है, कि उसे एक वाक्य में परिभाषित कर पाना सम्भव नहीं है। वास्तव में मानव द्वारा अप्रभावित प्राकृतिक शक्तियों को छोड़कर जितनी भी मानवीय परिस्थियाँ हमें चारों ओर से प्रभावित करती है, उन सभी की सम्पूर्णता को संस्कृति कहते हैं, और इस प्रकार संस्कृति के इस घेरे का नाम ही 'सांस्कृतिक पर्यावरण' है तथा सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रति मानवीय संवेदनशीलता सांस्कृतिक दृष्टिकोण है।

शिक्षा व्यवस्था में निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत प्रदान की जाने वाली शिक्षा व्यवस्था को औपचारिक शिक्षा कहा जाता है। औपचारिक शिक्षा व्यवस्था का आरम्भिक ढ़ाँचा विद्यालय होता है। विद्यालय समाज का दर्पण होता है, जहाँ भारत के भविष्य का निर्माण समाज के अभिकर्त्ता के रूप में प्रत्येक शिक्षक करता है। शिक्षक और छात्रों के बीच एक ट्रैक होता है, जो पाठ्यवस्तु के रूप में संकलित होता है, यह पाठ्यवस्तु समाज की आकांक्षाओं के अनुरूप होता है। जिसमें गौरवमयी अतीत की संस्कृति का परिमार्जित रूप जो वर्तमान युग में प्रचलन में है और इसमें भविष्य के भावी नागरिकों को उत्कृष्ट मानवीय इकाई बनाने के लिए वांछित है, सम्मिलित होता है।

स्वदेशी समाज में वैदिककाल से शिक्षा और शिक्षा व्यवस्थायें प्रचलित रही हैं, परन्तु मध्यकाल तक आते–आते वैश्विक मंच पर इस्लामिक विचारधारा का उदय हुआ तथा इसके प्रचार–प्रसार के लिए प्रचारकों को तलवार की धार के इस्तेमाल तक की छूट मिल गयी, जिससे जोश भरे इस्लाम प्रचारक शासन, सत्ता और इस्लाम प्रचार के लिए अरब और तुर्कीस्तान क्षेत्र से अखण्ड भारत समाज की तरफ बढ़े और यहाँ पहुंचकर यहाँ की सनातन संस्कृति, शिक्षा का माध्यम, शिक्षा व्यवस्था और पाठ्यवस्तु को छिन्न–भिन्न कर दिया। यह दौर आठवीं सदी के आरम्भ से लेकर बीसवीं सदी के मध्य तक अनवरत् रहा इस सहस्त्राब्दी के अन्तराल में सनातन संस्कृति और शैक्षिक–सामाजिक व्यवस्था शून्य प्रायः होकर कालिख में दब गयी। स्वाधीनता के बाद स्वदेशी समाज में स्वराज स्थापित हुआ और सत्ता के आदर्श स्वरूप लोकतान्त्रिक व्यवस्था में शिक्षा के उन्नयन के लिए औपचारिक व्यवस्था को मजबूत किया गया। जिसके लिए कई सारे आयोग और समितियाँ गठित की गयी, यथा तत्कालीन युवा प्रधानमन्त्री स्वर्गीय श्री राजीव गाँधी की प्रेरणा से देश में व्यापक विचार–विमर्श के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 का प्रारूप विकसित किया गया। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मूलभूत आधार यह है कि "वर्तमान एवं भविष्य में शिक्षा एक अनोखा निवेश है" इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा सभी के लिए है तथा इसके द्वारा भारतीय संविधान में अन्तर्निहित समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता एवं लोकतन्त्र के मूल्यों को प्रोत्साहन मिलना चाहिए। इसके अतिरिक्त शिक्षा अर्थव्यवस्था के सभी स्तरों के लिए मानव शक्ति का विकास करती है। इस शिक्षा नीति के अनुसार वर्तमान

में औपचारिक शिक्षा व्यवस्था एवं भारत की समृद्ध तथा विविधतापूर्ण संस्कृति के बीच बढ़ती जा रही दूरी को शीघ्र समाप्त करने की नितान्त आवश्यकता है।

आधुनिक तकनीकी नई पीढ़ी को भारतीय राष्ट्रीय संस्कृति एवं इतिहास के साथ अधिकतम समन्वय स्थापित करने के लिए अपनाई जानी चाहिए। प्रसंस्कृतिकरण, अमानवीयकरण एवं अलगाववाद से किसी भी कीमत पर बचा जाना चाहिए। शिक्षा के माध्यम से परिवर्तनोन्मुख तकनीकी एवं देश की सांस्कृतिक विरासत के बीच उत्तम सामन्जस्य स्थापित किया जा सकता है। अतः शिक्षा प्रक्रिया एवं पाठ्यक्रम, सांस्कृतिक विरासत सम्बन्धी अन्तर्वस्तु से समृद्ध की जायेगी। भारत सरकार द्वारा 1964 ईस्वी में डॉ. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता में एक शिक्षा आयोग का गठन किया गया जिसने प्राथमिक स्तर से उच्च स्तर तक के पाठ्यक्रमों में भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप व्यापक सुधार के लिए अनेक उपयोगी सुझाव दिये, जिससे शिक्षा प्रक्रिया में क्रमबद्धता एवं निरन्तरता आ सके।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर कमीशन) 1952–53 के अनुसार स्कूली स्तर पर पाठ्यक्रम का उद्देश्य मानवीय ज्ञान एवं अभिरूचि के व्यापक क्षेत्र के बारे में बालकों को अतिसामान्य ढ़ंग से परिचित करना होता है। इस स्तर पर ज्ञान के व्यापक एवं सार्थक क्षेत्रों में बालकों को सामान्य परिचय कराना चाहिए। मिडिल स्तर के पाठ्यक्रम में व्यापकता का संक्षिप्त समावेश होना चाहिए, जिससे बालक मानवीय ज्ञान एवं सभ्यता के प्रमुख तत्त्वों की जानकारी प्राप्त कर सकें तथा बाद में उच्च स्तर पर अध्ययन हेतु ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्र का चयन कर सके।

प्राथमिक स्तर पर विद्यालयी व्यवस्था को सम्मिलित किया गया। विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था को प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तरों में वर्गीकृत किया गया है। जिसके पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक दृष्टि से अतीत के अवशेषों को उकेरकर परिमार्जित और नवसृजित रूप से प्रकाशित करने के लिए पाठ्यवस्तु में राष्ट्रीय सांस्कृतिक घटकों को समावेशित किया जाना वांछित है– यथा सनातनी राष्ट्रीय संस्कृति– भौगोलिक विविधता, भाषयी विविधता, विविधता में एकता, धर्म प्रधान्य, गौरवमयी अतीत, धार्मिक सहिष्णुता, यज्ञ प्रधान्य, अध्यात्म प्रधान्य, समन्वयवादिता, व्यक्तित्त्व एवं चरित्र निर्माण, त्याग, तपस्या एवं तपोवन, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, पुरुषार्थ चातुष्ट्य, पंच महायज्ञ, कर्म एवं पुनर्जन्म, दैववाद, भाग्य एवं कर्म, आचार एवं व्यवहार, दान एवं परोपकार, राष्ट्रीयता एवं आत्म–गौरव एवं विश्व–बन्धुत्त्व की भावना।

सामयिक राष्ट्रीय संस्कृति :–राष्ट्रीय स्मारकों का संरक्षण, संविधान में आस्था, लोकतन्त्र में आस्था, पर्यावरण संरक्षण, सात्विकता, मानवीय अन्तर्सम्बन्ध, वैश्विक सद्भाव एवं सनातनी समभाव, यौगिक षट्कर्म, अष्टांग मार्ग, ध्यान, भोजन के नियम और आयुर्वेद में विश्वास। विषयवस्तु– विषयवस्तु किसी प्रसंग, प्रघटना या अन्य आयाम का सूक्ष्म तथ्यात्मक सारांश होता है। यह पाठ्यक्रम से संकुचित परन्तु केन्द्रीय होता है, विषयवस्तु छोटे सम्पुट हैं, जो किसी विषय– प्रसंग, घटना या आयाम को विस्तृत रूप से समझने के लिए आधार है। स्वदेशी पाठ्यवस्तु– श्री गुरूजी के अनुसार, ''अपना राष्ट्र सनातन है, इसकी एक जीवन पद्धति है, राष्ट्र का एक दर्शन है, इस राष्ट्र का नाम है हिन्दुस्तान। धर्म इस राष्ट्र का प्राण है। धर्म, यानि उपासना पद्धति, ग्रंथ प्रमाण्य, कर्मकाण्ड नहीं, अपितु विश्व की धारणा करने वाले नियम, उसी का आधार लेकर राष्ट्र जीवन की रचना होनी चाहिए।'' राष्ट्रहित कार्य सबसे अधिक महत्त्व के हैं, शेष सभी बातें राष्ट्रकार्य की उपांग हैं। क्योंकि शिक्षाक्रम के किसी भी आयोजन में पाठ्यवस्तु एक पद सोपान है, जिसके माध्यम से निर्धारित उद्देश्यों को योजनाबद्ध ढंग से प्राप्त किया जा सकता है। क्योंकि पाठ्यवस्तु देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार बदलते हैं, हमारे समाज भारतखण्ड में वैदिक काल से वर्तमान तक के शिक्षाक्रम में संस्कारों और संस्कृति को महत्त्व दिया जाता रहा है। 'भारतीय संस्कृति का विकास 'प्रकृति' के साथ 'कृति' और 'सुकृति' के सुयोग से हुआ है। 'व्यष्टि' और 'समष्टि' के तालमेल से सम्पूर्ण सृष्टि का दोहन व शोषण न करके हमारा आदर्श था– 'आत्मनः मोक्षार्थ–जगत् हिताय च'। अर्थात् 'संसार के बन्धनों से स्वयं मुक्ति प्राप्त करते हुए मैं विश्व का भला कर सकूँ'। धर्म सदाचार के अन्तर्गत योग और ललित कलाएँ अर्थात् तन+मन+अध्यात्म के कौशल आते थे। संस्कृति के विकास में भाषा–भोजन–भजन–भूषा–भवन–भेषज तथा भ्रमण पर ध्यान दिया गया। संस्कृति इन सभी कारकों का योग है।'' किसी भी समाज में संस्कृति के बाद सभ्यता पनपती है, अर्थात संस्कृति प्रक्रिया है, और सभ्यता परिणाम। सभ्यताऐं पल्लवित और विध्वंसित होती रही, परन्तु सांस्कृतिक आयाम विभिन्न माध्यमों से आगे बढ़ते रहे हैं। आज के पाठ्यवस्तु में भारतीय प्रसंग में अपनी गौरवमयी परम्परा को पहचानने वाले विभिन्न आयामों को जैसे– विद्यालयी व्यवस्था, गुरू–शिष्य सम्बन्ध, पाठ्यवस्तु की प्रकृति जो दोनों को प्रभावित एवं प्रेरित करें, स्वदेशी समाज के संस्कारों को स्पष्ट करें, स्वदेश

प्रेम और भ्रातत्त्व भावना विकसित कर मानव को श्रेष्ठ मानव बना सके तथा अपने लोक–रिवाजों, महान व्यक्तित्त्वों के आदर्शों को आत्मसात कर वैश्विक स्तर पर उनका प्रकाशन कर सके तथा उच्च आदर्श नागरिक समाज में प्रतिष्ठापित कर सके, वर्तमान की भौतिकवादी संस्कृति को नकार कर अध्यात्मवादी आदर्श मूल्यों को समझकर उनका समाज में प्रसारण कर सकने में सहायक हो ऐसी पाठ्यक्रम सामग्री स्वदेशी पाठ्यवस्तु की श्रेणी का होगा।

विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर राष्ट्रीय संस्कृति के समावेश हेतु विषयवस्तु की रूपरेखा अधोलिखित है–

(1) घर–परिवार, समाज व राष्ट्र की संकल्पना का विवरण।

(2) प्राथमिक स्तर पर स्थानीय सांस्कृतिक आयामों को शामिल कर संक्षिप्त सारांशगत विवरण प्रस्तुत एवं प्रकाशित करना।

(3) माध्यमिक स्तर पर राष्ट्र, राष्ट्रवाद और गौरवमयी संस्कृति के घटकों का समावेश।

(4) सनातन व्यवस्था का उल्लेख ।

(5) प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की सीख।

(6) जीवनचर्या के प्राकृतिक नियम– यम, नियम, आसन्न, प्राणयाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि का विवरण।

(7) संस्कृति को समझने में सहायक घटकों का उल्लेख।

निष्कर्ष

1. गर्भावस्था में व्यक्ति के भावी जीवन की तैयारियाँ चलती हैं।

2. संस्कारों के परिमार्जन से संस्कृति का जिर्णोद्धार और सभ्यता का नवनिर्माण होता है।

3. संस्कारयुक्त प्रतिमान लोगों द्वारा स्वीकार कर अपने आचरण में सामान्यीकृत, उचित शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से ही सम्भव होता है।

4. शिक्षा मानव के सर्वांगीण विकास का एक प्रबल आयाम है। शिक्षा संस्कारों का परिमार्जन एवं स्थानान्तरण करती है।

5. विद्यालय समाज का दर्पण होता है, जहाँ समाज के अभिकर्त्ता के रूप में शिक्षक कार्य करता है।

6. पाठ्यवस्तु देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार बदलते हैं, वैदिक काल से वर्तमान तक के शिक्षाक्रम में संस्कारों और संस्कृति को महत्त्व दिया जाता रहा है।

7. भारतीय संस्कृति का विकास 'प्रकृति' के साथ 'कृति' और 'सुकृति' के सुयोग से हुआ है।

8. व्यष्टि' और 'समष्टि' के तालमेल से सम्पूर्ण सृष्टि का दोहन व शोषण न करके हमारा आदर्श है। 'आत्मनः मोक्षार्थ–जगत् हितायच'।

9. राष्ट्रवादी मूल्यों का विकास, पर्यावरण संरक्षण, प्राकृतिक घटकों की समझ विकसित करने वाली पाठ्यवस्तु को शिक्षा व्यवस्था में लागू किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नागौरी, एस.एल. (1998). विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ. नई दिल्लीः सरस्वती सदन.

2. व्यास, प्रकाश (1998). भारत का इतिहास एवं संस्कृति. जयपुरः पंचशील प्रकाशन.

3. शर्मा, कालूराम (1998). भारत का इतिहास एवं संस्कृति. जयपुरः पंचशील प्रकाशन.

4. गुप्त, शिवकुमार (2009). भारतीय संस्कृति के मूलाधार. जयपुरः राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी.

5. भाटिया, अर्चना (2013). भारत की राष्ट्रीय संस्कृति. नई दिल्लीः रोहित पब्लिकेशन.

6. भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका (2009,जनवरी–जून). लखनऊः निरालानगर, सरस्वती कुँज. अंक–01

7. वर्मा, डॉ. मनीषा. (2012–13). बात शिक्षा की शोध पत्रिका. अंक–1.

8. शिक्षक अन्तर्दृष्टि (जनवरी–अप्रेल 2015). वर्ष–2. अंक 4–5.

9. बात शिक्षा की शैक्षिक शोध पत्रिका (2015, मार्च). अंक 03.

*** Corresponding Author:**

डॉ.रामावतारए *सहायक प्राध्यापक*

शिक्षा संकाय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (मानित् विश्वविद्यालय)

गाँ.वि.मन्दिर, सरदारशहर (चूरू) राज

Email-ramawatargodara@gmail.com, Mob. - 93514046609